शिक्षक की अहम भूमिका

विकासशील शिक्षक

कमल महेन्द्रू



1929 में लिखे गए एक लेख में विज्ञान का सफल शिक्षक उसे माना गया है जो:

''...अपने खुद के विषय को भलीभाँति जानता हो... विज्ञान की दूसरी शाखाओं का भी अच्छा खासा ज्ञान रखता हो... पढ़ाना जानता हो... खुद को स्पष्टता के साथ व्यक्त कर पाता हो... कार्य संचालन में कुशल हो.. मेज़ पर और प्रयोगशाला में, दोनों ही जगह अपना काम चतुराई से करता हो... पूरी तरह से तर्क में निष्णात हो... दार्शनिक किस्म का हो... इस सीमा तक इतिहास का ज्ञाता हो कि वह विद्यार्थियों की भीड़ के बीच बैठकर उनके साथ गैलिलियो, न्यूटन, फैराडे और डार्विन जैसी प्रतिभाओं के व्यक्तिगत समीकरणों, उनके जीवन व कार्यों की चर्चा कर सके। इससे भी ज़्यादा ज़रूरी यह है कि उसे उत्साही होना चाहिए एवं अपने कार्य में उसकी पूरी आस्था होना चाहिए।''[1]

अस्सी साल बाद भी यह बात सही लगती है। पर विज्ञान के आदर्श शिक्षक की इस व्याख्या में कुछ और बातें भी जोड़ी जा सकती हैं। इस वर्णन की एक कमी इसका पुरुष-प्रधान होना है जो ज़ाहिर सी बात है आज के समय के माफिक नहीं है। हो सकता है ये सारी क्षमताएँ यथार्थ में हासिल करना कुछ ज़्यादा ही आदर्शवादी लगे, पर इससे शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम के लिए सही दृष्टिकोण देने में मदद मिलती है। ऐसा शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम कैसे तैयार किया जाए जिसमें इस लक्ष्य को पा सकने की सम्भावना हो? इसे और स्पष्ट करें तो, एक अच्छे शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम में क्या होना चाहिए?

मैं शिक्षकों के साथ चर्चाओं में उनके सामने अच्छे विज्ञान शिक्षण के सिद्धान्तों पर भाषण (अथवा पावरपॉइंट प्रस्तुति) देने के बजाय यह कोशिश करता हूँ कि वे किसी विशेष प्रश्न या अवधारणा की पड़ताल करें। ऐसा ही एक प्रश्न है गिरती हुई वस्तुओं के बारे में। यदि हम किसी निश्चित ऊँचाई से एक भारी वस्तु और एक हल्की वस्तु को एक साथ एक ही समय पर गिराएँ तो इसमें से क्या होने की सम्भावना है:

अ) हल्की वस्तु, भारी वस्तु से पहले ज़मीन पर पहुँचेगी।

ब) भारी वस्तु, हल्की वस्तु से पहले ज़मीन पर पहुँचेगी।

स) दोनों वस्तुएँ एक ही समय पर ज़मीन पर पहुँचेंगी।

रोचक बात है कि लगभग हमेशा ही अधिकांश लोग विकल्प (ब) को चुनते हैं। शुरू-शुरू में मुझे उनके उत्तर से उनके ज्ञान के स्तर को लेकर काफी निराशा-सी हुई। क्योंकि यह सवाल हाईस्कूल स्तर के विज्ञान का है। पर उनके इस भ्रम के पीछे छिपे कारण को समझा जा सकता है। हमारे रोज़मर्रा का अनुभव हमें किसी पत्थर के गिरने के बजाय सूखी पत्तियों, कागज़ के टुकड़ों या पंखों के हवा में बहते हुए धीरे-धीरे ज़मीन तक पहुँचने की याद दिलाता है। यहाँ तक कि महान यूनानी दार्शनिक अरस्तु ने भी अनुमान लगाया था कि किसी गिरती हुई वस्तु की रफ्तार उसके वज़न के समानुपातिक होगी।[2] लगभग दो हज़ार साल बाद गैलिलियो ने उसके इस मत को चुनौती दी और पीसा की मीनार से तोप के गोले और बन्दूक की गोली को एक साथ गिराया। शैक्षिक शोधकर्ताओं ने इस समस्या को भोली धारणाओं या सामान्य अन्तर्बोध से उनके विपरीत बोध वाली अवधारणाओं पर पहुँचने की यात्रा कहा है।

'कठिन विषय-बिन्दुओं' की एक सूची बनाकर उसमें इस तरह की अवधारणाओं को शामिल कर लेने, और उन्हें समझाने के निरन्तर प्रयासों से यह समस्या नहीं सुलझती। ऐसी अवधारणाओं को विद्यार्थियों/शिक्षकों के साथ तार्किक ढंग से पुनः परखने के लिए किसी प्रक्रिया को शुरू करने की ज़रूरत है। यह प्रयास अक्सर ऐसे किसी प्रयोग के साथ प्रारम्भ किया जा सकता है जो चिन्तन प्रक्रिया की शुरुआत के लिए उत्प्रेरक का काम करे।

एक नोटपैड तथा उसमें से निकाले गए एक पेज के साथ सरल प्रयोग करके अच्छी शुरुआत की जा सकती है। उस पेज तथा नोटपैड को एक निश्चित ऊँचाई (कुर्सी या मेज़ पर खड़े होना पर्याप्त होगा) से एक साथ छोड़ने पर अरस्तु का अन्दाज़ा सही साबित होता है।

तब क्या होगा अगर हम उस कागज़ को नोटपैड के ठीक नीचे रखें और उन्हें एक साथ छोड़ें? सब सहमत होते हैं कि भारी पैड हल्के कागज़ को अपने साथ ले जाएगा और दोनों एक ही समय पर ज़मीन पर गिरेंगे। यह प्रयोग, सिद्धान्त को प्रयोग द्वारा सिद्ध करने के तरीके की छोटी-सी सफलता का प्रदर्शन मात्र है!

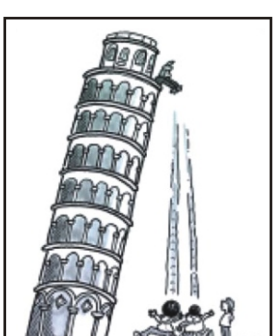
अगले प्रयोग में कागज़ को पैड के ऊपर, उससे पूरी तरह मिलाकर रखना है। ज़मीन पर पहले कौन पहुँचेगा – कागज़ या पैड? मैंने कभी-कभार ही इस बात पर सन्देह करने वाले लोग पाए हैं कि भारी पैड हल्के कागज़ को बहुत पीछे छोड़ देगा। पर प्रयोग का नतीजा अक्सर ही एक आश्चर्यचकित मौन छोड़ जाता है। इस प्रयोग को खुद करें और देखें कि कागज़ पैड के साथ गिरता है! कुछ लोग, यह सन्देह करते हुए कि कहीं इसके पीछे कोई चालाकी

1. वेस्टवे, 1929 पेज 3 एज कोटेट इन मैथ्यूज 1994 पेज 201

2. कैजोरी 1920

तो नहीं, इसे खुद करके देखना चाहेंगे उनका स्वागत करते हुए सच्ची वैज्ञानिक भावना के साथ उन्हें प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

इसके बाद एक जोशीली चर्चा शुरू होती है। क्या हमारा यह मानना सही है कि अपने भारों के अनुपात में भारी वस्तु हल्की वस्तु से जल्दी नीचे गिरेगी? यह आम सहमति उभरती है कि इस मामले में जो अन्तर था वह सम्भवतः इन दोनों वस्तुओं के नीचे जाने की यात्रा के दौरान हवा द्वारा पैदा किए गए प्रतिरोध में अन्तर के कारण है। फिर भी ऐसे पर्याप्त संशयवादी लोग हैं जो इस विचार को स्वीकार नहीं कर सकते कि सम्भवतः इसमें भार कोई कारक ही नहीं है। यह स्थिति अगला प्रयोग करने के लिए एकदम सही है। उसी कागज़ को मुट्ठी में दबाकर एक कसी हुई गेंद की शक्ल दी जाती है, तथा फिर से नोटपैड और कागज़ की गेंद को नीचे गिराया जाता है। वे लगभग एक साथ ही गिरते प्रतीत होते हैं। लेकिन सन्देह प्रकट किए जाते हैं कि उन दोनों को ठीक एक ही क्षण पर गिराया गया था कि नहीं। कुछ समूह जोश में उठ कर ऐसे तरीके ईज़ाद करने लगते हैं जिनसे यह सुनिश्चित हो सके कि कागज़ की गेंद और नोटपैड को एक ही ऊँचाई से व एक ही समय पर छोड़ा जाए। वे यह भी सुनिश्चित करना चाहते हैं कि जहाँ तक सम्भव हो सके दोनों वस्तुओं के ज़मीन पर गिरने के समय का सही–सही अवलोकन किया जाए। सैकेण्ड के सौंवे हिस्से तक समय मापने वाली स्टापवाच के साथ आने वाले मोबाइल फोन अक्सर शिक्षकों की जेबों में मौजूद रहते हैं। जितना सम्भव हो उतना सही–सही प्रयोग करने के लिए तरीका ईजाद करने में कुछ समय 'गंवाना', तथा तीनों कथनों के बारे में अनुभव और प्रयोग के आधार पर सिद्ध किए जा सकने वाले निष्कर्ष निकालने की कोशिश करना, बिलकुल जायज़ और सराहनीय है।



अब गैलिलियो और उसके 100 पौंड के तोप के गोले तथा आधे पौण्ड की बन्दूक की गोली के साथ किए गए प्रयोगों की बात करते हैं। हमारा कागज़ की गेंद व नोटपैड वाला प्रयोग उन प्रयोगों की पुनरावृत्ति है जो सुनते हैं गैलिलियो ने पीसा की मीनार से किए थे। अपने प्रयोग से पूर्णतया आश्वस्त होकर गैलिलियो ने दावा किया कि अरस्तु ने अपने अनुमान को पुष्ट करने के लिए कभी कोई प्रयोग नहीं किया और इसलिए वे गलत थे। पर गैलिलियो ने अपने तर्क को रोचक ढंग से विकसित किया। यह तर्क उनकी किताब 'डायलॉग्ज़ ऑन टू न्यू साइन्सेज़' में वर्णित है। ये संवाद तीन व्यक्तियों के बीच होते हैं सलवियाटो, जो गैलिलियो के तर्कों को सामने रखता है; सिम्प्लीसियो, जो अरस्तु की दृष्टि को प्रस्तुत करता है; तथा सैग्रेडो, जो तार्किक ढंग से सोचने वाला निष्पक्ष व्यक्ति है और वह पहले दो के बीच हो रहे संवादों पर अपनी राय देता है। गैलिलियो के जीवन व कार्यों के विभिन्न पक्षों को नाटकीय ढंग से बताया जा सकता है, पर यहाँ हमारी विषयवस्तु के लिए प्रासंगिक तर्क का सार प्रस्तुत है।

अरस्तु के अनुमान को स्वीकार करते हुए, यदि हम दोनों गेंदों को इकट्ठी बाँधकर गिराते हैं, तो सैद्धान्तिक तर्क हमें दो निष्कर्षों की तरफ ले जा सकता है। चूँकि हल्की गेंद गिरने में ज़्यादा समय लेती है, वह भारी गेंद की गति को भी धीमा कर देगी, और अकेली भारी गेंद की तुलना में, इन दोनों को मिलकर ज़मीन तक पहुँचने में ज़्यादा समय लगेगा। जबकि यदि हम उन दोनों के संयुक्त भार को लें तो वह अकेले तोप के गोले की तुलना में ज़्यादा होगा और इस तरह दोनों को मिलकर ज़मीन पर पहुँचने में तोप के गोले की तुलना में कम समय लगना चाहिए। ये दो तर्क एकसाथ तर्कसंगत किन्तु विरोधाभासी दोनों हैं। गैलिलियो का मानना है कि इसका अर्थ यह हुआ कि प्रारम्भिक अनुमान वैध नहीं है, तथा किसी वस्तु का भार सीधे तौर पर, गिरने में लगने वाले समय अथवा गिरने की रफ्तार को प्रभावित नहीं करता। जो अन्तर हमें नज़र आता है वह उस माध्यम द्वारा प्रस्तुत किए जाने वाले प्रतिरोध के कारण होता है जिसमें वस्तु गिर रही होती है। यह प्रतिरोध कई इकट्ठे कारकों पर निर्भर करता है, जैसे वस्तु का आकार, उसके पदार्थ का घनत्व, माध्यम का घनत्व, माध्यम की गति आदि।

फिर गैलिलियो ने कल्पना की तार्किक छलांग लगाते हुए कहा कि माध्यम–मुक्त स्थिति – निर्वात – में एक हल्की और एक भारी वस्तु ठीक एक ही समय पर गिरेंगी। समूह के प्रत्येक व्यक्ति द्वारा इस सैद्धान्तिक दलील को आत्मसात करने के लिए धैर्य और दोहराव की ज़रूरत होती है। इस तरह की तार्किक बहस में प्रशिक्षित होना विज्ञान सीखने का उतना ही ज़रूरी अंग है जितना कि प्रायोगिक कौशल विकसित करना।

सन 1971 में, चाँद पर भेजे गए अपोलो 15 मिशन के अन्तरिक्ष यात्री डेविड स्कॉट ने एक हथौड़ा और पंख चाँद पर गिराए। उसका वीडियो हमें दर्शाता है कि उस वायुरहित सतह पर वे दोनों एक ही रफ्तार से एक साथ तल पर पहुँचते हैं, जिससे कि प्रायोगिक रूप से गैलिलियो का तर्क सही साबित हो जाता है।

आगे की चर्चा में, इस अवधारणात्मक विकास के एक बहुत महत्वपूर्ण पक्ष को उभारा जा सकता है। गैलिलियो के प्रयोगों ने यह तो ज़रूर दिखाया कि अरस्तु का अनुमान सही नहीं था, पर वायु के प्रभाव के चलते गैलिलियो खुद पूरी ईमानदारी और आश्चर्यजनक बारीकी के साथ दर्ज किए गए अपने दावे को भी पूर्ण विशुद्धता के साथ प्रमाणित नहीं कर सके। दो दशकों के अत्यधिक परिश्रमपूर्ण प्रयोगों और सिद्धान्त निर्माण के बाद वह दावा किया जा सका

जिसने विज्ञान की क्रियाएँ करने के दो नए तरीके ईजाद किए – आदर्शीकरण और वैचारिक प्रयोग। कक्षा को उत्साहित करने तथा उन्हें और गहरी जाँच–पड़ताल में ले जाने के लिए उनके सामने अनेक रोचक प्रश्न रखे जा सकते हैं। अरस्तु जैसा बुद्धिमान व्यक्ति ऐसा दावा कैसे कर सकता था? ऐसे कौन–से सैद्धान्तिक आधार थे जिनकी वजह से उसने ऐसा दावा किया? क्या हम अब भी यह कह सकते हैं कि किसी अन्य ग्रह पर पूर्ण निर्वात में हथौड़ा और पंख दोनों गिरने में बिलकुल एक ही समय लेंगे? इनमें से कुछ सवाल अभी भी विज्ञान के खुले सवाल हैं, तथा बहुत कुछ और भी सोचा जा सकता है।

एक महत्वपूर्ण प्रश्न जो उठाया गया, यह है – क्या अब शिक्षकों ने ऐसे प्रश्नों से जूझने के लिए पर्याप्त गहरी समझ हासिल कर ली होगी, जैसे प्रश्न से हमने शुरुआत की थी? इसका उत्तर हाँ भी हो सकता है और ना भी। पर यह विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि वे लोग एक विचारात्मक यात्रा पर निकल पड़े होंगे। जो अब उन्हें झुके हुए समतलों और पेण्डुलमों के साथ की गई गैलिलियो की जाँच–पड़तालों से लेकर न्यूटन के गति व गुरुत्वाकर्षण के नियमों तक ले जा सकती है। इससे गति की उनकी समझ गहराएगी; जैसा कि न्यूटन ने कहा था, ...'(उनको तैयार करो) ताकि वे विराट व्यक्तित्वों के कन्धों पर चढ़कर दूर तक देख सकें'। ऐसे सत्रों के बाद शिक्षकों की उत्साहित और गम्भीर प्रतिक्रियाओं तथा प्रश्नों से बड़ा संतोष और प्रोत्साहन मिलता है।

अब इस तरह के मार्ग को चुनने के पीछे की मान्यताओं को सामने रखना बाकी रह जाता है। विज्ञान पढ़ाने और उसकी गतिविधियाँ करने का हमारा तरीका, विज्ञान की पद्धति तथा उसके वैचारिक ढाँचों की हमारी दोहरी समझ पर ही निर्णायक रूप से निर्भर करता है। यह दोहरी समझ विज्ञान का प्रयोग करने की हमारी क्षमता व आत्मविश्वास के साथ चलती है। जैसा कि आइन्सटाइन ने बड़ी स्पष्टता के साथ कहा था:

'अनुमानित अवधारणाओं और व्यवस्थाओं के बगैर कोई प्रायोगिक पद्धति नहीं होती; और अनुमानों पर आधारित ऐसा कोई चिन्तन नहीं होता जिसकी अवधारणाएँ, नज़दीकी पड़ताल करने पर, उनको पैदा करने वाली प्रायोगिक सामग्री को उजागर नहीं करतीं।'

> प्राकृतिक ज्ञान में होने वाली प्रत्येक बड़ी प्रगति में अधिकार को पूरी तरह से ठुकराया गया है।
> – थॉमस एच. हक्सले

विज्ञान के इतिहास और दर्शन का उपयोग शिक्षकों और विद्यार्थियों को यह बताता है कि यह पद्धति और यह वैचारिक ढाँचा कैसे विकसित हुआ। उनके साथ फिर से पीछे जाकर विज्ञान की यात्रा के कुछ महत्वपूर्ण चरणों का पुनरावलोकन करने से उनकी समझ, और उस समझ को उपयोग कर सकने वाला कौशल दोनों विकसित होंगे। इससे वैज्ञानिक कार्यपद्धति के साथ जुड़े महत्वपूर्ण मूल्य उभरकर सामने आते हैं – जैसे संशय करना, (तथाकथित पांडित्य की) सत्ता पर आधारित किसी रूढ़िवादी सिद्धान्त को स्वीकार नहीं करना तथा निष्कर्ष निकालने में, या उनका बचाव करने में, साक्ष्य और विवेकपूर्ण तार्किक प्रक्रिया की निर्णायक भूमिका।

विषय के बारे में उनके ज्ञान और उसके साथ जुड़े हुनर को पक्का करने के अलावा, यह तरीका शिक्षकों, और उनके ज़रिये छात्रों, को इस केन्द्रीय प्रश्न से रूबरू होने का अवसर देता है कि – ज्ञान, ज्ञान मीमांसा तथा सारी शिक्षा का लक्ष्य क्या है? यह उन्हें विज्ञान के समाजशास्त्र, उसके नीतिशास्त्र एवं मूल्यों के बारे में एक और दृष्टि देता है। इन सबसे मिलकर बनती है एक बहुत बदनाम अवधारणा–'वैज्ञानिक सोच'– जो भारतीय संविधान में वर्णित एक प्रतिबद्धता है।

हम शिक्षकों को उपदेश दिए जाने के ज़्यादा आदी हैं, कि उन्हें कैसे पढ़ाना चाहिए या क्या पढ़ाना चाहिए। अब समय है शिक्षक–प्रशिक्षकों, पाठ्यक्रम निर्माताओं, प्रशासकों और नीति निर्माताओं को स्वयं के आचरण में वह करके दिखाने का जिसकी सीख वे शिक्षकों को देते हैं। यह करने में, वे ऐसे तरीकों को अपनाने पर आमतौर पर होने वाली उन आलोचनाओं का जवाब भी दे सकेंगे जिनमें ऐसे तरीकों को अत्यधिक समय लेने वाला बताया जाता है, और यह शंका जताई जाती है कि इस तरीके से पूरा पाठ्यक्रम नहीं पढ़ाया जा सकेगा। केन्द्रीय मुद्दा पाठ्यक्रम नहीं बल्कि हमारी शिक्षा के लक्ष्य हैं।

सन्दर्भ

कैजोरी,एफ.: 1920, ऐरिस्टॉटल एण्ड गैलिलियो ऑन फॉलिंग बॉडीज़, साइन्स, न्यू सीरीज़, 51 (1329), 615–616.

फ़ॉलोइंग द पाथ ऑफ डिस्कवरी: फेमस ऐक्सपैरीमैन्ट्स एण्ड इन्वैन्शन्स, गैलिलियो गैलिली: द फॉलिंग बॉडीज़ ऐक्सपैरीमेन्ट। इसे http://www.juliantrubin.com/bigten/galileofallingbodies.html#galileodispute से हासिल किया गया।

फाउलर, एम.: गैलिलियो एण्ड आइंस्टाइन: लैक्चर नोट्स http://galileoandeinstein.physics.virginia.edu/tns.htm

गैलिली, गैलिलियो: 1632 (1953, संशोधित 1967), स्टिलमैन ड्रेक अनुवादक, अल्बर्ट आइंस्टाइन प्राक्कथन, डायलॉग कनसर्निंग द टू चीफ वर्ल्ड सिस्टम्स: टॉल्मैक एण्ड कोपर्निकन, यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस, बर्कले।

गैलिली, गैलिलियो 1638, 1914 (1954), हैनरी क्रू एण्ड अल्फॉन्सो डे सल्वियो, अनुवादक, डायलॉग्ज़ कनसर्निंग टू न्यू साइंसेज़, डोवर पब्लिकेशन्स इन्कॉ., न्यू यॉर्क।

मैथ्यूज़, एम.आर.: 1994, साइन्स टीचिंग: द रोल ऑफ हिस्ट्री एण्ड फिलॉसोफी ऑफ साइन्स, रटलेज, न्यू यॉर्क।

रैबिनोविट्ज़, एम.: 1990, फॉलिंग बॉडीज़: द ऑब्वियस, द सटल एण्ड द

रॉन्ग, आईईईई पावर एन्जीनियरिंग रिव्यू, 10, 27–31.
http://arxiv.org/ftp/physics/papers/0702/0702155.pdf

श्रैंक, एम.ए.: 2004, 'गैलिलियो वर्सेस ऐरिस्टॉटल ऑन फ्री फॉलिंग बॉडीज़', लॉजिकल ऐनालिसिस ऑफ फिलॉसोफी, अंक 7: हिस्ट्री ऑफ फिलॉसोफी ऑफ नेचर
http://philsci_archive.pitt.edu/archive/00002524/01/Galileo_vs_Aristotle_on_Free_Falling_Bodies.pdf

द गैलिलियो प्रॉजेक्ट: ऑन मोशन
http://galileo.rice.edu/sci/theories/onšmotion.html से हासिल किया गया।

द मैप प्रॉजेक्ट: द केस ऑफ फॉलिंग बॉडीज़ प्रॉजेक्ट,
http://ppp.unipv.it/map/pagine/intro_00.htm से हासिल किया गया।

द फिज़िक्स हाइपरटैक्स्टबुक: फॉलिंग बॉडीज़,
http://hypertextbook.com/physics/mechanics/falling

थिंकक्वैस्ट: गैलिलियो,
http://library.thinkquest.org/29033/history/galileo.htm

यूनिवर्सिटी ऑफ हवाई: द नेचर ऑफ फिज़िकल साइन्स : द फर्स्ट साइन्टिस्ट, प्रोग्राम 13, लैसन 2.5.
http://honolulu.hawaii.edu/distance/sci122/Programs/p13/p13.html से हासिल किया गया।

यूनिवर्सिटी ऑफ हवाई: द नेचर ऑफ फिज़ीकल साइन्स : द न्यू फिज़िक्स, प्रोग्राम 14, लैसन 2.6.
http://honolulu.hawaii.edu/distance/sci122/Programs/p14/p14.html से हासिल किया गया।

वैस्टवे, एफ. डब्ल्यू.: 1929, साइन्स टीचिंग, ब्लैकी एण्ड सन, लन्दन।

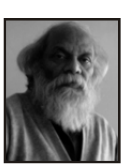
विकीपीडिया: गैलिलियो गैलिली,
http://en.wikipedia.org/wiki/Galileo_Galilei से हासिल किया गया।

यूट्यूब.कॉम: द हैमर एण्ड द फैदर,
http://www.youtube.com/watch?v+4mTsRZEMwA

कमल महेन्द्रू** वैज्ञानिक सोच और बहुसांस्कृतिक सन्दर्भों में विज्ञान शिक्षा पर शोध करते हुए स्कूल ऑफ ऐजुकेशन, न्यू साउथ वेल्स विश्वविद्यालय, सिडनी में दो साल का अध्ययनकाल पूरा करके आए हैं। वे किशोर भारती (होशंगाबाद), एशियन वर्कर्स डैवेलपमैन्ट इन्सटीट्यूट (राउरकेला), एकलव्य (भोपाल), विद्या भवन ऐजुकेशन रिसोर्स सेन्टर (उदयपुर), और छत्तीसगढ़ ऐजुकेशन रिसोर्स सेन्टर (रायपुर) के साथ नज़दीकी तौर पर जुड़े रहे हैं। उन्हें विज्ञान तथा गणित के शिक्षण, शिक्षा में नए परिवर्तनों एवं ग्रामीण विकास के क्षेत्र में काम करने का तीस सालों से भी ज़्यादा का अनुभव है। उनसे इस पते पर सम्पर्क किया जा सकता है : kmahendroo@yahoo.com

स्कूली शिक्षक : परिवर्तन के वाहक

विजय वर्मा



भारत में स्कूली शिक्षा में सुधार के लिए किए गए प्रयोगों, जैसे कि होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम, ने यह दर्शाया है कि अच्छे स्तर की शिक्षा प्रदान करने के अभिक्रम में शिक्षक अति महत्वपूर्ण होते हैं। जब भी कोई शिक्षक सुधार के विचार को मन से अंगीकार कर लेता है तो सुधारों के सफल होने की सम्भावना होती है। पर जब भी शिक्षक का रवैया प्रतिकूल या उदासीन होता है तो सुधार निश्चित रूप से असफल हो जाते हैं।

पाठ्यक्रम विकास या पाठ्यपुस्तकें तैयार करने की सामान्य प्रक्रिया बेहद केन्द्रीकृत गतिविधि होती है। खासतौर पर जब प्रक्रिया एनसीईआरटी जैसे संगठनों के नेतृत्व में की जा रही हो, ऐसी जिसमें चीज़ों के ऊपर से नीचे उतरने के सीढ़ी जैसे ढाँचे वाला मार्ग अपनाया जाता है। ऐसा माना जाता है कि अधिकांश बुद्धिमत्ता ऐसे संगठनों द्वारा गठित 'विषय विशेषज्ञों' के समूह या पैनल में होती है। इनमें कुछ थोड़े से ऐसे शिक्षकों की मामूली भागीदारी भर होती है जिन्हें मुख्य रूप से उनके उपलब्ध होने की सहूलियत के कारण चुन लिया जाता है। ऐसे प्रयास आमतौर पर कुछ महत्वपूर्ण तथ्यों को नज़रअन्दाज़ कर देते हैं। एक पाठ्यक्रम (जिसके सफलतापूर्वक लागू किए जा सकने की सम्भावना हो) को विकसित करने में हमें विषय की माँगों के प्रति तो संवेदनशील होना चाहिए। जिन बच्चों के लिए इसे बनाया जा रहा हो उनके विचारात्मक विकास को, स्कूल में उपलब्ध संसाधनों को, और सबसे महत्वपूर्ण, उन शिक्षकों की तैयारी को भी ध्यान में रखना चाहिए जिन्हें वास्तव में शिक्षण का कार्य करना है। इसे करने का सिर्फ़ एक ही तरीका है कि इस ज़िम्मेदारी के लिए गठित समूह उस क्षेत्र के शिक्षकों को इस प्रक्रिया के केन्द्रीय पात्र के रूप में स्वीकार करे। समूह को इस कदर स्वयं ही हर बात का निदान बतानेवाला रवैया भी नहीं अपनाना चाहिए कि शिक्षकों को शिक्षण प्रक्रिया में उनके अपने दृष्टिकोण और अनुभव को सम्मिलित करके पाठ्यक्रम से अपनत्व बनाने का मौका ही न मिले।